छुआछूत के समर्थक और गांधी की हत्या के आरोपी थे गीता प्रेस के संस्थापक हनुमान प्रसाद पोद्दार

जनचौक ब्यूरो

(गीता प्रेस को देश का प्रतिष्ठित गांधी शांति पुरस्कार देने की घोषणा की गयी है। लेकिन इसको लेकर अब विवाद पैदा हो गया है। यह विवाद गीता प्रेस और उसके संस्थापक की भूमिका को लेकर है। दरअसल गीता प्रेस के संस्थापक हनुमान प्रसाद पोद्दार शुरू में महात्मा गांधी के गरीब ज़रूर थे लेकिन बाद में वह उनके धुर वैचारिक विरोधी हो गए थे। और उनके खिलाफ खुल कर लिखने लगे थे। इसी कड़ी में जब 30 जनवरी 1948 को गांधी की हत्या हुई तो उन आरोपियों में पोद्दार का नाम भी आया। ऐसे में जो शख्स और उसकी संस्था किसी की हत्या की आरोपी रही हो उसे भला कैसे उसके नाम से बने पुरस्कार से पुरस्कृत किया जा सकता है? पोद्दार और उनकी संस्था गीता प्रेस की पूरी भूमिका को लेकर वरिष्ठ पत्रकार और लेखक अक्षय मुकुल ने 'गीता प्रेस और हिंदू भारत का निर्माण' नाम से एक किताब लिखी है। उसमें गांधी और पोद्दार के रिश्तों से जुड़े अंश को यहां दिया जा रहा है-संपादक)

इसके बाद पोद्दार सीधे अपनी बात पर पहुंचे, 'इन दिनों दलितों द्वारा एक बड़ा आंदोलन चलाया जा रहा है जिसे आपके अनशन ने तीव्र कर दिया। बहुत सी जगहों पर लोग दलित के साथ भोजन कर रहे हैं और उन्हें मंदिर में जाने की अनुमति मिल गई है। इसका परिणाम ईश्वर ही जानता है। जैसे लोग भगवान और शास्त्रों को मानने वालों को अंधविश्वासी कहते हैं वैसे ही मेरा मानना है कि यह आंदोलन भी अंधविश्वास का मारा है और विवेकशून्य है। यहां तक कि दलितों के साथ भोजन करने वाले भी यह मान रहे हैं कि (जबकि मैं दलितों के साथ भोजन करने को समानता का प्रतिमान नहीं मानता हूँ) जब तक वे नहाना, साफ़ कपड़े पहनना, मांस-मदिरा सेवन, मृत ढोर-ढांगर खाने आदि में नेम-नाम नहीं बरतते, तब तक वे शुद्ध नहीं माने जाएंगे। सिर्फ़ तभी सह-भोजन के मायने बनते हैं।

लेकिन आपका सह-भोजन और मंदिर प्रवेश आंदोलन इस बात की पुष्टि नहीं कर रहा है कि वे ये नियम मान रहे हैं। केवल साथ में भोजन किया जा रहा है, मंदिर में प्रवेश दिया जा रहा है और उन्हें रीति-रिवाज बरतने की अनुमति दी जा रही है। सभी अस्पृश्यता को दरकिनार कर रहे है, लेकिन कोई दलित को ऊपर उठाने की बात नहीं कर रहा। क्या यह सुधार में कमी नहीं है? क्या यही शुद्धता का समृद्धीकरण है या उसकी बर्बादी? क्या आपने हमारे शरीर और हमारी आत्मा पर इस अनियंत्रित असम्मान के चलते पड़ने वाले प्रभावों के बारे में सोचा?'

'पूरे सम्मान के साथ मैं दोहराना चाहता हूँ कि साथ बैठ कर भोजन करने और हर क्षेत्र में समान अधिकार की बात दलितों के प्रति प्रेम पैदा नहीं कर पाएगी। वह केवल साफ़ मन और अच्छे व्यवहार द्वारा ही संभव है। पांडव और कौरव भी साथ बैठ कर भोजन किया करते थे लेकिन यही महाभारत की वजह बनी ।'

यह कहा नहीं जा सकता कि पोद्दार के इन तर्कों से गांधी कितने सहमत हुए, लेकिन पोद्दार ने गांधी को आईना दिखाने के लिए अपनी अंतिम चाल चली। उन्होंने गांधी को याद दिलाया कि उनका यह सुधारवादी उत्साह स्वयं उनके द्वारा अतीत में विचार से मेल नहीं खाता है। उन्होंने गांधी द्वारा 1920 के दशक के शुरुआती दौर में नवजीवन में जाति और अस्पृश्यता पर लेखन के उद्धरणों की सूची बना कर उसे पत्र के साथ ही नत्थी कर दिया। इन लेखों में गांधी ने कहा था कि अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए अंत्यजनों के साथ भोजन करना ज़रूरी नहीं है और न ही उन्हें विवाह हेतु बेटी देना आवश्यक है, 'मैं यह नहीं कहता कि आप बिना धोये उनके लोटे से पानी पियें।' 'अगर साथ बैठ कर भोजन करने का परिणाम मैत्री है, तो यूरोप ने वह भीषण युद्ध न झेला होता' और 'अछूत सभी मंदिरों में प्रवेश कैसे पा सकते हैं?' इन उद्धरणों से न केवल जाति के मसले पर गांधी के परस्पर विरोधी विचार उजागर हुए बल्कि पूना पैक्ट पर भी उनका ढुलमुल रवैया स्पष्ट हुआ।

पोद्दार का पुत्र बहुत निर्मम था, वे उसमें गांधी को, कांग्रेस के उदारवादियों को और बुद्धिजीवियों की जमात को लगभग झिड़क रहे थे। 'आपका सम्मान करने वाला कोई अगर आज आपकी और आपके विचारों की आलोचना और आपके मान्यताओं की दुर्बलताओं को चिन्हित करे तो उस पर हमला किया जा रहा है और उससे अभद्रता की जा रही है। उसे दकियानूसी, सनातन धर्मी, गद्दार और न जाने क्या-क्या कहा जा रहा है। हाल में ही काशी में एक बैठक के बीच पत्थरबाजी की घटना हुई। इन हालातों में कई लोगों को स्वराज्य की अवस्था संदिग्ध ही लगती है।'

इसके आगे पोद्दार ने गांधी के सामने सवालों की झड़ी लगा दी। 'मैं जानता हूँ कि आप किसी की मान्यता या विचार को बलपूर्वक बदलने में विश्वास नहीं रखते। आपने कई बार कहा है कि व्यक्ति के पास अपना धर्म मानने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। लेकिन क्या हो रहा है?

सभी तरह के लोग को किसी एक तरह की धार्मिक मान्यता वाले समूह के पूजा स्थल के भीतर तक उनकी इच्छा के विरुद्ध प्रवेश करने की इजाज़त उस संस्थान को चला रहे समूह विशेष की धार्मिक स्वतंत्रता का हनन है या नहीं? यह हमारी मंदिर व्यवस्था को नष्ट कर देगा। जिन्हें हम अंदर जाने के लिए कह रहे हैं या हमने उनसे पूछा कि वो अंदर जाना चाहते भी हैं या नहीं? अगर वे जाना ही चाहते हैं तो उनके लिए अलग मंदिर क्यों न बना दिए जायें?

आखिरकार, राम शबरी की कुटिया में गए थे, लेकिन यहां सारा मामला ही अधिकारों का हो गया है।' कल्याण में पहले ही भारी आलोचना झेल रहे बीआर अंबेडकर का हवाला देते हुए पोद्दार ने गांधी से कहा कि दलित नेता पहले ही यह स्पष्ट कर चुके हैं कि उनका आंदोलन भगवान के लिए नहीं है बल्कि यह सामाजिक समानता और सरकारी नौकरियों में मज़बूत पैठ की लड़ाई है। अंत में पोद्दार ने दोहराया कि वे गांधी के भक्त नहीं हैं, 'मैं आपका अनुयायी नहीं हूँ बल्कि आपके परिवार का सदस्य हूँ। अपने अनुयायियों से आग्रह कीजिए की वे इस अमर्यादित व्यवहार को यहीं रोक दें। मैंने आपको, जो हो रहा है, उसकी बस एक झलक भर दी है। वास्तव में इससे बहुत कुछ ज्यादा हो रहा है। यह दरअसल एक व्यक्ति की धार्मिक स्वतंत्रता पर हमला है।'

गांधी ने शीघ्र प्रतिक्रिया दी। वे पोद्दार द्वारा उद्धृत नवजीवन के अपने एक-एक शब्द पर कायम रहे। 'मैं क्या कहता हूँ, ये समझने के लिए मेरे आचरण को समझना आवश्यक है। मैं ऐसी कोई बात नहीं कहता जो मेरे आचरण के विपरीत है। मैं ऐसा कोई काम नहीं करता जो मेरी कही हुई बातों के विपरीत हो। जब भी मेरा आचरण मेरी कही हुई बात के अनुरूप नहीं होता तो मैं अपनी कमज़ोरी को स्वीकार करता हूँ।'

पोद्दार के आरोप का जवाब देते हुए गांधी ने कहा, 'मैं अपने कर्म, वचन और आचरण के बीच कोई असंगति नहीं देखता।' उन्होंने अपने आप को उन लोगों से अलग बताया जो 'सनातनियों' को ताना देते हैं, गांधी ने कहा कि 'हिंसा' अस्पृश्यता के विनाश में बाधक होगी। और 'स्वच्छता और कुछ नियमों पर चलना हमेशा ही ज़रूरी होता है।' उन्होंने आगे कहा, 'ज्स मामले में दबाव बनाना या जो लोग साथ-साथ खाना खाने से मना कर रहे हैं, उनको घृणा की नज़र से देखना पाप है।' गांधी का यह मानना था कि इस तरह के सुधार देखने से पहले वे मरना पसंद करेंगे। क्योंकि 'मेरा विश्वास है की जबरन न तो अस्पृश्यता को खत्म किया जा सकता है और न ही हिंदू धर्म को बचाया जा सकता है।'

इसी पत्र में गांधी ने सनातन धर्म के अनुयायियों को अस्पृश्यता व दलितों को मंदिर में प्रवेश न करने देने जैसी सामाजिक कुरीतियों के लिए दोषी ठहराया। हिंदुओं ने जाति से बाहर एक जाति गढ़ते हुए अब तक दलित के साथ निर्दयी और धर्म विरुद्ध व्यवहार करना जारी रखा है। देर-सवेर हिंदुओं को इसका प्रायश्चित करना होगा। गांधी ने पोद्दार को बताया कि 'इसमें मेरा निजी स्वार्थ भी है क्योंकि मैं खुद को 'संतुष्ट' करना चाहता था। इसके लिए मैं आपसे भी सहयोग क अपेक्षा रखता हूँ।'

अस्पृश्यता पर पोद्दार की धारणा को बदलने में गांधी के बेहतरीन प्रयत्न भी नाकाम हुए। कल्याण के पृष्ठों के माध्यम से गांधी पर पोद्दार के आक्षेपों का सिलसिला सन् 1948 तक चलता रहा। इस तरह पोद्दार की ओर से गांधी की भक्ति के रूप में शुरू हुए संबंध 1930 के दशक में राष्ट्रीय आंदोलन के तीव्र दौर में अचानक तेज़ी से बदल गए जब गांधी सामाजिक मुद्दों पर अपनी राय को नए सिरे से गढ़ रहे थे।

यही वह समय भी था जब मुसलमान, दलित और सशक्त हिंदू कांग्रेस में अपनी जगह मज़बूत करके ब्रिटिश सरकार के खिलाफ़ एकजुट हो रहे थे। सन् 1956 के अंत तक भी पोद्दार अपनी मान्यता का समर्थन अलग-अलग तर्कों से करते रहे। उन्होंने कहा कि, 'अस्पृश्यता का मतलब किसी से घृणा करना नहीं है, वह तो एक वैज्ञानिक तत्त्व है और शास्त्र सम्मत है।'

सन् 1932 से पहले ही पोद्दार में गांधी के प्रति घटते आदर भाव के संकेत मिलने लगे थे। अपने मित्र प्रभाशंकर गुत को सन् 1932 में लिखे एक पत्र में पोद्दार ने कहा, 'महात्मा गांधी जी को मैं अवश्य ही भारतीय भेष में पश्चात संत मानता हूँ। महात्मा जी के बहुत से विचार मेरी समझ में नहीं जंचते, कुछ तो अनुचित भी जंचते हैं। मैं उन्हें नहीं मानता।' वह आदमी जिसकी सादगी, सेवा भाव, आध्यात्मिकता और स्वदेशी के लिए प्रेम ने पोद्दार को तेज़ी से प्रभावित किया था वही आदमी अब धीरे-धीरे उनका आदर्श नहीं रह गया। वही अब (उनकी नज़रों में) हिंदू धर्म की मान्यता के लिए सबसे बड़ी बाधा और चुनौती बन गया था।

तब भी पोद्दार और गांधी के संबंधों में यथासमय मधुरता बनी रही। सन् 1937 में पोद्दार ने गांधी को अपने सुबह-सुबह देखे गए सपने के बारे में लिखा जिसमें किसी ने कहा कि 'गांधी का शरीर अब बहुत दिन नहीं रहेगा, उनसे कहो बाकी जीवन केवल भगवान के भजन में ही बिताएं।' पोद्दार ने कहा उन्हें इस तरह के सपने नहीं आया करते लेकिन वो कामना करेंगे कि यह सपना झूठा निकले। 'तीन दिन तक इसी असमंजस में रहा कि आपको लिखूं या नहीं। आख़िर लिख देना ही उचित समझा ।

अवश्य यह मेरा लड़कपन ही है, चरणों में निवेदन है इस ढिठाई के लिए क्षमा करें। इस पर्चे को पढ़ कर कृपया फाड़ डालें जिससे मेरी यह ढिठाई किन्हीं भी महानुभाव के उद्वेग का कारण न हो' गांधी ने पोद्दार के सपने को 'प्रेम का संकेत' माना। मृत्यु के बारे में उन्होंने कहा कि वह तो जन्म की साथी है और सबसे वफादार है। वो कभी चूकती नहीं है। और ईश्वर की आराधना मौत के नज़दीक होने पर ही क्यों की जाये? मेरे लिए तो आराधना हर पल होने वाली क्रिया है। गांधी ने यह भी पूछा कि पोद्दार क्यों चाहते हैं कि उनका सपना झूठा निकले। अगर मैं सौ साल भी जियूँगा तब भी वो मेरे मित्रों के लिए कम होगा। तो आज हो या कलज्या फ़र्क़ पड़ता हैज!'

सन् 1940 में जब गांधी ने गो-सेवा संघ की स्थापना की तब जमना लाल बजाज ने पोद्दार से पत्र लिखकर इस नए संघ के संविधान के बारे में उनके विचार जानने चाहे। बजाज ने पोद्दार से आग्रह किया कि वे इस संघ के सदय बनें और कुछ जिम्मेदारियां अपने कंधे पर लें। भले ही पोद्दार ने कल्याण में गांधी का विरोध किया लेकिन निजी स्तर पर वे उनका सम्मान करते थे। गोरखपुर से उन्होंने बजाज को लिखा, 'यद्यपि महात्मा गांधी जी के बहुत से विचार और कार्य समझ में नहीं आते बल्कि बहुत जगह तो प्रत्यक्ष ही मन का प्रबल विरोध दिखाई पड़ता है। इससे विचार में बड़ा व्यवधान हो गया है। तदापि बापू तो सदा बापू ही हैं। महात्मा गांधी के विचारों से बापू की भक्ति का क्या संबंध।'

पोद्दार ने अहमदाबाद कांग्रेस की सन् 1921 की बैठक के बाद सोच-समझकर कांग्रेस पार्टी से दूरी बना ली थी और अब वे खुलेआम हिंदू महासभा के साथ मिलकर काम कर रहे थे। वे सन् 1946 की गोरखपुर में हुई हिंदू महासभा के वार्षिक सम्मेलन के मुख्य आयोजकों में से एक थे। कल्याण और हिंदू महासभा ने मिलकर गांधी पर तीखे प्रहार किए। पोद्दार को इसका खामियाज़ा आज़ादी के पांच महीने बाद तक भुगतना पड़ा।

दिल्ली के बिड़ला हाउस में नाथूराम गोडसे और हिन्दू महासभा से जुड़े लोगों के द्वारा 30 जनवरी, 1948 को गांधी की हत्या के परिणाम स्वरूप पूरे देश में 25,000 से ज्यादा लोगों के गिरफ्तारी के लिए वारंट जारी हुए जिनमें से पोद्दार और उनके गुरु जयदयाल गोयन्दका का भी नाम था। जीडी बिड़ला ने इन दोनों की सहायता से इंकार कर दिया और सर बद्रीनाथ गोयनका द्वारा इनकी पैरवी का भी उन्होंने (बिड़ला ने) विरोध किया। बिड़ला के अनुसार, 'ये दोनों सनातन धर्म के नहीं, शैतान धर्म के प्रचारक थे।'

हैरानी की बात है कि निजी कागज़ात से समृद्ध गोरखपुर की लाइब्रेरी में गांधी की हत्या से जुड़े संदर्भ नहीं मिले। यहाँ तक कि पोद्दार केन्द्रित प्रबंधों और भक्तिभाव से भरी जीवनियों में भी कहीं इसका ज़िक्र नहीं मिलता। गांधी की हत्या से जुड़ा एक ज़िक्र पोद्दार की अप्रकाशित जीवनी की पाण्डुलिपि में मिला है। इसके अनुसार, हत्या के दिन 30 जनवरी,1948 को पोद्दार दिल्ली में थे। पाण्डुलिपि हनुमान प्रसाद पोद्दार और जयदयाल गोयन्दका के क़रीबी सहयोगी व गीता प्रेस के पूर्व प्रबंधक महावीर प्रसाद पोद्दार को गांधी की हत्या में इन दोनों के शामिल होने की अफ़वाह फैलाने के लिए दोषी मानती है। 'महावीरसाद कई कारण से भाई जी (हनुमान प्रसाद पोद्दार) के विरोध में अफ़वाह फैला रहे हैं, (कि) गीता प्रेस और 'कल्याण' गांधी की हत्या के लिए ज़िम्मेदार है।

पिछले कई महीने से वे कांग्रेस के नेताओं से पत्राचार के माध्यम से संपर्क में हैं। इस पाण्डुलिपि की मानें तो हनुमान प्रसाद पोद्दार को महीनों परेशान किया गया लेकिन वे निडर होकर लखनऊ, इलाहाबाद, कलकत्ता, दिल्ली, रतनगढ़ और अन्य जगहों पर घूमते-फिरते रहे। गोरखपुर के जिला कलेक्टर ने पोद्दार को सूचित कर दिया था कि शहर न लौटें क्योंकि उनके खिलाफ़ गिरफ्तारी का वारंट कभी भी निकाला जा सकता है। इस पाण्डुलिपि ने दबी जुबान में ही इसे 'दुर्भाग्यपूर्ण घटना' कहकर संबोधित किया। चूंकि गंभीरचंद दुजारी जो हनुमान प्रसाद पोद्दार के जीवनी लेखक थे, सन् 1948 में गोरखपुर में नहीं थे और उनकी लिखी जीवनी में किसी ख़ास बात का ज़िक्र नहीं किया गया है।

महात्मा की हत्या पर गीता प्रेस ने बहुत सोची-समझी चुप्पी बरतना जारी रखा। जिस व्यक्ति का आशीर्वाद और लेखन कभी 'कल्याण' के लिए अति महत्वपूर्ण हुआ करता था, उसी के लिए कल्याण के पृष्ठों में कोई जगह नहीं थी । हत्या के बाद कल्याण में गांधी का पहला ज़िक्र अप्रैल 1948 में आया, जब पोद्दार ने गांधी के साथ अपनी कई मुलाक़ातों के बारे में लिखा। उनके उद्धरण अब पत्रिका के पृष्ठों में धीरे-धीरे लौटने लगे थे, लेकिन असली सवाल का जवाब अभी तक नहीं मिला था। सन् 1948 के फरवरी और मार्च के कल्याण के अंकों में गांधी का कोई ज़िक्र क्यों नहीं था?

सीआईडी के अभिलेख कुछ हद तक इस सवाल का जवाब देते हैं। मामले में लिप्त आरएसएस को बचाने में पोद्दार ने पूरा ज़ोर लगा दिया था। गांधी की हत्या में कथित भूमिका होने के कारण 4 फरवरी, 1948 को आरएसएस को प्रतिबंधित कर दिया गया था। 15 जुलाई, 1949 में नेहरु सरकार द्वारा आरएसएस से प्रतिबंध हटाने के चार दिन बाद पोद्दार ने आरएसएस के साप्ताहिक पांचजन्य के संपादक अटल बिहारी वाजपेयी के साथ गोरखपुर में एक सार्वजनिक बैठक में भाग लिया। वाजपेयी ने प्रतिबंध की आलोचना करते हुए कहा, 'आरएसएस को प्रतिबंधित करना सरकार और कांग्रेसियों की ओर से भारी भूल है, यही एकमात्र संगठन है जो हिंदुओं के लिए कुछ कर सकता है।' उन्होंने कहा, 'इस प्रतिबंध को हटाने के लिए मैं सरकार का शुक्रगुज़ार नहीं हूं, अपनी ग़लती को सुधारने में इन्होंने डेढ़ साल लगा दिए।' सीआईडी की रिपोर्ट के अनुसार पोद्दार ने भी 'इसी ढब का एक छोटा-सा भाषण दिया था।'

पोद्दार का आरएसएस से जुड़ाव वाजपेयी के साथ केवल बैठक में शामिल होने तक ही सीमित नहीं था। सन् 1949 में गोलवलकर ने जेल से रिहा होने के बाद संयुक्त प्रांत के कुछ महत्वपूर्ण शहरों का दौरा किया, पोद्दार ने उनमें से एक कार्यक्रम के अध्यक्ष के नाते बनारस में गोलवलकर का स्वागत किया। उन्होंने धाराप्रवाह हिंदी में भाषण दिया। सीआईडी के अनुसार टाउन हॉल में आरएसएस प्रमुख को सुनने के लिए 30,000 से ज़्यादा लोगों की भीड़ उमड़ी थी। इसमें गोलवलकर ने हिंदू संस्कृति के पुनरुत्थान, भारत के एकीकरण और राज्य की भाषा के रुप में हिंदी के प्रयोग पर ज़ोर दिया। 'समाजवादियों और कम्युनिस्टों के द्वारा समर्थन प्राप्त कार्यकर्ताओं के 'गोलवलकर लौट जाओ', 'बापू का हत्यारा संघ' जैसे नारे के बाद भी गोलवलकर का भाषण जारी रहा। गोलवलकर को काले झंडे दिखाए गए और सैकड़ों प्रदर्शनकारी गिरफ्तार किए गए।

(अक्षय मुकुल की किताब 'गीता प्रेस और हिंदू भारत का निर्माण' से यह अंश साभार लिया गया है)